International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(6): 108-110

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2023; 9(6): 108-110
© 2023 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 07-10-2023
Accepted: 10-11-2023

**डॉ. सागर कुमार**
संस्कृत विभाग, कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत विश्वविद्यालय, रामटेक, महाराष्ट्र, भारत

**Corresponding Author:**
**डॉ. सागर कुमार**
संस्कृत विभाग, कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत विश्वविद्यालय, रामटेक, महाराष्ट्र, भारत

# वेदार्थ निर्धारण में वैदिक साहित्य की उपादेयता

**डॉ. सागर कुमार**

**प्रस्तावना**

विश्व साहित्य में वेद ही सबसे प्राचीन साहित्य है। मानव संस्कृति के प्राचीनतम रुप तथा विकास को समझने के लिए वेदों का परिशिलन अपरिहार्य है। मानव जाति के इतिहास के ज्ञान के लिए और भाषा विज्ञान की गुत्थियों को सुलझाने के लिए वेदों का अध्ययन आवश्यक माना जाता है। वेद भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की अमूल्य निधि है, जो आज भी वैज्ञानिक उपलब्धियों के मध्य अपने ज्ञान गौरव की अक्षुण्णता का अबाध उद्घोष कर रहे हैं। इसीलिए तो महाभाष्यकार पतञ्जलि ने सदियों पूर्व लिखा था कि "ब्राह्मण को निष्कारण ही छ: अङ्गों सहित वेद का अध्ययन करना चाहिए और उसका अर्थ भी जानना चाहिए।[1]

अत: वेदों को ही आधार मानकर भारतीय दार्शनिक, धार्मिक तथा सामाजिक ज्ञान के भव्य - प्रासाद को प्रतिभासम्पन्न वाक् शिल्पयों ने खडा किया है। अत: वेदों का अनुशिलन तथा उनके मौलिक सिद्धन्तों एवं तथ्यों का उद्घाटन ज्ञान के संवर्धन एवं उन्नयन के लिए विशेष उपयोगी है।

वेदों की महिमा का वर्णन करते हुए अनेक आचार्यों ने अपने विचार प्रकट किये हैं – ऋक् प्रातिशाख्य की व्याख्या में आचार्य विष्णु मित्र ने कहा- "जिन ग्रन्थों के द्वारा धर्म अर्थ,काम तथा मोक्षरुपी पुरुषार्थ –चतुष्टय के अस्तित्व का बोध, प्राप्ति और विवेचन किया गया हों, वे वेद हैं।[2] आचार्य सायण ने वेद शब्द की अन्य व्याख्या की है – "जो ग्रन्थ इष्ट प्राप्ति और अनिष्ट निवारण का अलौकिक उपाय बताता है उसे वेद कहते है"।[3] इस प्रकार अनेक आचार्यों ने वेदों का यशोगान किया हैं।

वेदत्व :- वेद शब्द का प्रयोग सामान्यत: मन्त्र और ब्राह्मण इन दोनों के लिए होता है।[4] किन्तु मन्त्र ही मुख्यत: वेद हैं। वेद के ब्राह्मणभाग में मन्त्र भाग की व्याख्या ही प्रस्तुत की गई है। भट्ट भास्कर ने कहा है कि कर्म तथा कर्म में प्रयुक्त होने वाले मन्त्रों के व्याख्यान ग्रन्थ को ही ब्राह्मण कहा गया है।[5]

वेदों की संख्या : - वेदों की संख्याओ के विषय में थोडी-सी शङ्काये मन में आती है। तथापि ऋग्वेद[6] इत्यादि वचनों से सिध्द है कि वेद चार हैं। मन में शङ्का इसलिए होती है कि अग्निवायु[7] इत्यादि वचनों के अनुसार ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद ये तीन ही वेद सिध्द हैं। यहाँ अथर्ववेद की गणना वेदों में नही की गई है। वेदों को 'त्रयी' यह नाम भी सिध्द करता है कि वेद तीन ही हैं और पुरुष सूक्त में ऋक्,साम,और यजु: तीनों की चर्चा है, अथर्व की नही।[8]

उपरोक्त सूक्तियों से वेद की संख्या के सन्दर्भ में सन्देह उत्पन्न हो जाता है, एक पक्ष को ठीक मानने पर दूसरा पक्ष अप्रामाणिक ठहरता है। इसका समाधान यह है कि वेद वस्तुत: चार हैं। "त्रयी विद्या" "त्रयं ब्रह्म सनातन" इत्यादि वाक्यों से जो वेद का त्रित्व प्रतिपादित होता है वह रचनापेक्षया है। अर्थात् वेदों की रचना है – पद्यात्मक, गीत्यात्मक, और गद्यात्मक। पद्यात्मक रचना को "ऋक्" कहते है और गीत्यात्मक रचना को साम। इनसे भिन्न गद्यात्मक रचना के लिए "यजुष्" शब्द का प्रयोग होता है। वेद ही क्यों समस्त वाङ्मय ही इन्ही तीन प्रकार की रचना में मिलता है। चौथे प्रकार की अन्य कोई रचना ही नहीं है । रही अथर्ववेद की बात तो अथर्ववेद में जितने भी मन्त्र हैं प्राय: पद्यात्मक है और जो भी गद्यात्मक है उनका अन्तर्भाव यजुष् में होता है। अत: संहिताएँ चार ही हैं।

व्यास का मत- कहा जाता है कि मूलत: वेद एक ही था। मन्त्रों के याज्ञिक प्रयोग को दृष्टि में रखकर महर्षि कृष्ण द्वैपायन ने एक ही वेद को चार मन्त्र संहिताओं में विभक्त कर दिया। वेदों को विभक्त करने के कारण ही महर्षि कृष्ण द्वैपायन को "वेदव्यास" कीसंज्ञा से विभूषित किया गया है। मन्त्र संहिताएँ चार हैं – ऋग्वेद संहिता, यजुर्वेद संहिता,सामवेद संहिता तथा अथर्ववेद संहिता। इस प्रकार वेद का महत्त्व तथा उनकी संख्याओं का निर्धारण होता है। वेद विश्व साहित्य की अमूल्य निधि है अत: उनका अध्ययन करना हमारा परम कर्त्तव्य है।

**ब्राह्मण आरण्यक एवं उपनिषद्**

वेदों में निहित ज्ञान-विज्ञान को सम्यक् प्रकार से समझने के लिए भारतीय मनीषियों के द्वारा ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना की गयी है । ब्राह्मणों को भी वेद कहा गया हैं। वेदों का वह भाग जो विविध वैदिक यज्ञों के लिए वेदमन्त्रों की व्याख्या करता है

वह ब्राह्मण कहलाता है। अत: ब्राह्मण ग्रन्थ यज्ञ विधान प्रमुख ग्रन्थ है जो कि वेद के व्याख्यान ग्रन्थ हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थों में जिस याज्ञिक प्रक्रिया का वर्णन है उनके दार्शनिक सिध्दानत की मीमांसा आरण्यक ग्रन्थों में की है। आरण्यकों का प्रतिपाद्य विषय भी वेदों का अभिन्न अंग माना जाता है। आरण्यक वे है जहाँ दार्शनिक चिन्तन दिया गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों के समान प्रारम्भ होने के बावजूद आरण्यकों की सामग्री में भिन्नता है। आरण्यकों में यज्ञ के विधान नहीं अपितु उसमें निगूढ दार्शनिक चिन्तन को दर्शाया गया है। अत: आरण्यक भी वेद ही है।

आरण्यकों के पश्चात् वेदों के तीसरे अभिन्न अंग उपनिषद् हैं जहाँ कथानक के माध्यम से ब्रहम विद्या की चर्चा की गयी है। सामान्य मनुष्य भी वेदों में वर्णित ब्रह्म रहस्य को समझ सके इसलिए उपनिषदों की रचना प्रश्नोत्तर तथा कथानक के माध्यम में से की गयी है अत: इन्हे भी वेदों का अंग माना गया हैं।

उपनिषदों के पश्चात् वेदाङ्गों का क्रम आता हैं जहाँ मन्त्र के वास्तविक स्वरुप को जाना जाता है। जिनके पठन से हम वेदों के गूढ रहस्यों को भलिभाँति समझ सकते हैं।

**वेदाङ्ग:**

वेद धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष इन चार प्रकार के पुरुषार्थों के प्रतिपादक हैं। ये वेद भी अंगों के द्वारा ही व्याख्यायित होते हैं। अत: वेदाङ्गों का अतिशय महत्त्व है। काव्यशास्त्र में अङ्ग शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है- उपकार करनेवाला। अर्थात् वेदों के वास्तविक अर्थ का भलिभाँति दिग्दर्शन करानेवाला। जैसा कि कहा गया है – " अङ्ग्यन्ते ज्ञायन्ते अमीभिरिति अङ्गानि।" अर्थात् जिसके द्वारा वस्तु के स्वरुप को जानने में सहायता मिलती है उस वस्तु को अङ्ग कहते है। अत: वेदों के स्वरुप को जानने में जो उपयोगी शास्त्र है उन्हें वेदाङ्ग कहते हैं। वेदाङ्ग छ: हैं जिनकी कल्पना वेदपुरुष के रुप में की गयी है।[9]

**शिक्षा:** वेदों के प्राणभूत वेदाङ्गों में शिक्षा का अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा विशिष्ट स्थान है। शिक्षा का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ करते हुए वेदभाष्यकार आचार्य सायण लिखते है [10] "जिसके द्वारा हमें वैदिक मन्त्रों के शुध्दातिशुध्द उच्चारण होता है उसे शिक्षा के नाम से जाना जाता है"। शिक्षा वेदपुरुष का घ्राण है।[11] जिस प्रकार समस्त अङ्गों की यथास्थिति रहने पर तथा मुख सौन्दर्य आदि से परिपुष्ट होने पर भी घ्राण (नासिका) के बिना कोई भी व्यक्ति चमत्कारपूर्ण स्वरुप को नही प्राप्त कर सकता अपितु निन्दित होता है, उसी प्रकार वेदपुरुष का स्वरुप शिक्षारुपी घ्राण के बिना अत्यन्त अशोभनीय और विकृत आकारवाला हो जाता है। कहने का तात्पर्य है कि जिससे ऋग्वेद आदि वैदिक मन्त्रों का अविकल विशुध्द उच्चारण हो, उस वेदाङ्ग को "शिक्षा शास्त्र" कहते है।

**कल्प:** विपुल वेदाङ्ग साहित्य में कल्प का दूसरा स्थान है। ऋग्वेद प्रातिशाख्य में कल्प के विषय में कहा गया है कि कल्प वेद-प्रतिपादित कर्मों को भलिभाँति विचार प्रस्तुत करने वाला शास्त्र है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिन ग्रन्थों में यज्ञ के प्रयोगों की कल्पना या समर्थन किया जाए उन्हें कल्प के नाम से जाना जाता है।[12] इसी को हम दूसरे शब्दों में कह सकते है कि यज्ञ यागादि विधानों का विवाह-उपनयन अदि कर्मों का महत्त्वपूर्ण प्रतिपादन जिन ग्रन्थों में किया गया है उन सूत्रग्रन्थों का नाम कल्प है।

**व्याकरण:** व्याकरण वह वेदाङ्ग है जो पदों की प्रकृति तथा प्रत्यय का उपदेश देकर पदों के स्वरुप का परिचय कराता है। इसे वेदरुपी पुरुष का मुख स्वीकार किया गया है।"मुख व्याकरणं स्मृतम्"। ऋग्वेद ४/५८/६ में व्याकरण शास्त्र का एक से रूपक बांधा गया है- इस वृषभ के नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात – ये चार सींग है,भूत, भविष्य और वर्तमान – ये तीनों काल इसके तीन पाद हैं, सुप् और तिङ् रूप इसके दो सिर इन तीनों स्थानों में बँधा हुआ शब्द करता है। यह महान् देव मनुष्यों के शरीर में प्रवेश किये हुए है-

चत्वारि श्रृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बध्दो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्या आविवेश॥

इस प्रकार ऋग्वेद में व्याकरणरुपी पुरुष का वर्णन किया है। अब व्याकरण का प्रयोजन ज्ञात करना अनिवार्य है। तो महर्षि पतञ्जलि महाभाष्य के पस्पशाह्निक में व्याकरण के पाँच प्रयोजन का वर्णन करते हैं- "रक्षोहागमलघ्वसन्देहा: प्रयोजनम्"। रक्षा,ऊह, आगम, लघु तथा असन्देह यह पाँच व्याकरण के प्रयोजन बताये गये हैं। जिससे व्याकरण की उपयोगिता सिध्द होती है। वेदों की रक्षा के लिए व्याकरण का अध्ययन करना अनिवार्य है। अत: वेदार्थ में व्याकरण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है, व्याकरण से वेदार्थ का यथावत् ज्ञान होता है । अत: वेदार्थ ज्ञान के लिए व्याकरण अध्ययन करना चाहिए।

**छन्द:**

"छन्द: पादौ तु वेदस्य" छन्द वेदाङ्ग को वेद का पाद कहा गया है। जिस प्रकार पैर के बिना मनुष्य चलने में असमर्थ होता है, उसी प्रकार छन्दोज्ञान के बिना वेद पंगु=लंगडा है। इसका तात्पर्य है कि छन्दों के सम्यक् ज्ञान के बिना वैदिक मन्त्रों का शुध्द उच्चारण नहीं हो सकता है। अत: वेद मन्त्रों के सम्यक् उच्चारण व भाव-बोधन हेतु छन्दों का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। इस सम्बन्ध में महर्षि कात्यायन ने स्पष्ट कहा है कि जो व्यक्ति छन्द ऋषि तथा देवता के ज्ञान से हीन होकर मन्त्र का अध्ययन, अध्यापन, यजन तथा याजन करता है उसका प्रत्येक कार्य निष्फल ही होता है- "यो ह वा अविदितार्षेयछन्दो-दैवत-ब्राह्मणेन – मन्त्रेण याजयति वा अध्यापयति वा स्थाणुं वर्छति गर्त्ते वा पात्यते या पापीयान् भवति"।

निरुक्तकार यास्कानुसार छन्द शब्द की व्युत्पत्ति "छद्" धातु से हुई है, जिसका अर्थ होता है- आच्छादित करना। यत: छन्द वेदों को आच्छादित करते है, अत: "छन्द" कहलाते है- "छन्दांसि छादनात्"। इसी अर्थ की पुष्टि में दुर्गाचार ने कहा है- "यदेभिरात्मानच्छादयन् देवा मृत्योर्बिभ्यत: तच्छन्दसां छन्दस्त्वम्"। तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है, "छन्दो से अपने शरीर को आच्छादित करके देवता अग्नि के पास गये, अत: इन्हें छन्द कहते है "ते छन्दोभिरात्मानां छादयित्वोपयंस्तच्छन्दसां छन्दस्त्वम्"। निघण्टु के अनुसार "छद्" धातु का अर्थ स्तुति करना, पूजा करना और प्रसन्न करना है। यत: छन्दों के द्वारा देवताओं की स्तुति की जाती है, अत: इन्हें "छन्द" कहते है।

लौकिक संस्कृत में मात्र पद्य को ही छन्द रुप माना गया है, परन्तु वैदिक साहित्य में, गद्य-पद्य सभी को छन्द से युक्त माना गया है। दुर्गाचार्य ने निरुक्त ७/२ की वृत्ति में किसी ब्राह्मण के वाक्य को उद्धृत् किया है, जिसका आशय है कि छन्द के बिना वाणी उच्चरित नही होती- "नाच्छन्दसि वागुच्चरति"। भरतमुनि भी नाट्यशास्त्र (१४/४५) में छन्द से विरहित शब्द स्वीकार नही करते है – "छन्दहीनो न शब्दोऽस्ति न छन्द: शब्द-वर्जितम्"। कात्यायन मुनि के नाम से प्रख्यात "ऋग्यजुष" परिशिष्ट पूर्वोक्त तथ्य की स्वीकृति देता है- "छन्दोभूतमिदं सर्वं वाङ्मयं स्याद् विजानत: । नाच्छन्दसि न चापृष्टे शब्दश्चरति कश्चन"। इन उद्धृत मतों के अनुसार वेद का ऐसा कोई भी मन्त्र नहीं है, जो छन्द के माध्यम से निर्मित नही है। फलत: यजुर्वेद के मन्त्र भी जो निश्चयेन गद्यात्मक है, छन्दों से रहित नहीं हैं। इसलिए प्राचीन आचार्यों ने एक अक्षर से लेकर १०४ अक्षर तक छन्दों का विधान अपने ग्रन्थों में किया है।

**ज्योतिष:**

"ज्योतिषामयनं चक्षु:"। ज्योतिष वेदपुरुष का नेत्र है। यत: वेद की प्रवृत्ति यज्ञ के सम्पादन के लिए है। और यज्ञ के विधान में विशिष्ट समय का ज्ञान अपेक्षित है। यथा तैत्तिरीय-ब्राह्मण का कथन है कि ब्राह्मण वसन्त में अग्नि का आधान करे, क्षत्रिय ग्रीष्म में, वैश्य शरद् ऋतु में आधान करे – "वसन्ते ब्राह्माणोऽग्निमादधीत, ग्रीष्मे राजन्य आदधीत। शरदि वैश्य आदधीत"। कुछ यज्ञ विशिष्ट मासों तथा विशिष्ट पक्षों में पाया जाता है – "एकाष्टकायां दीक्षेरन् फाल्गुनी पूर्णमासे दीक्षेरन्"। प्रात: काल तथा सायं काल में प्रत्येक अग्निहोत्री के लिए अग्नि में दुग्ध या घृत से हवन करने का नियम है – "प्रातर्जुहोमिसायं जुहोति"। इस प्रकार नक्षत्र, तिथि, पक्ष, मास ऋतु तथा सम्वत्सर काल के समस्त खण्डों के साथ यज्ञ-याग का विधान वेदों में पाया जाता है।अत: उक्त नियमों के निर्वाह के लिए ज्योतिष् का ज्ञान नितान्त आवश्यक तथा उपादेय है कि जो व्यक्ति ज्योतिष् को भली-भाँति जानता है, वही यज्ञार्थ का यथार्थ ज्ञाता है-

वेदो हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ता: कालाभिपूर्वा विहिताश्च यज्ञा:।
तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञम्॥

**निरुक्त:** निरुक्त को वेदपुरुष का श्रोत्ररुप अङ्ग माना जाता है। निरुक्त के अध्ययन के बिना मनुष्य वेद के सम्बन्ध मे कानों के होते हुए भी बहरा ही है। जैसे बहरे पुरुष के आगे स्वरताल आदि के साथ किसी गीत का गान अरण्यरोदन मात्र है। उसी प्रकार जिस पुरुष ने निरुक्त नही पढा उस पुरुष के आगे किसी मन्त्र की व्याख्या भी एक तरह से अरण्यरोदन ही होगी वह उसको ठीक तरह से नही ज्ञात कर सकता। आधिभौतिक जगत् में विचरने वाला पुरुष प्राय: आधिभौतिक संस्कारों से ही ओत-प्रोत रहता है। वह प्रत्येक मन्त्र को भौतिक दृष्टि से ही सोचने समझने का यत्न करता है। उसे यह विदित नही है कि वेद में आधिदैविक और आध्यात्मिक विषयों की भी चर्चा है। समस्त वैदिक विज्ञान देवतावाद पर आधारित है। वे देवता कितने है? उनका क्या स्वरुप है? वे चेतन है या अचेतन है इसका विस्तार से वर्णन निरुक्त में ही है।अत: वेदार्थ को समझने के लिए "निरुक्त" का अध्ययन परमावश्यक है।

अत: वेदार्थ निर्धारण में अध्येता को ब्राह्मण,आरण्यक,उपनिषद् तथा वेदाङ्गों का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। इन तत्व ग्रन्थों के वेदार्थ निर्णय करना संभव नही है, अत: वेदार्थ के लिए वेदार्थ के लिए इन तत्व कोजानना ही होगा।

## संदर्भ सूची


1. ब्राह्मणेन निष्कारण: षडङ्गो वेदाऽध्येयो ज्ञेयश्च।, महा. पस्पशा. ।
2. विद्यन्ते ज्ञायन्ते लभ्यन्ते एभिर्धर्मादि पुरुषार्थ इति वेदा:। ऋक्.प्रा.
3. इष्टप्राप्त्यनिष्ट परिहारयोरलौकिक उपाय यो ग्रन्थ: वेदयति स वेद:। तै. सं.भा. भू.
4. मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्। आप. परि. 31
5. ब्राह्मणं नाम कर्मणस्तन्मन्त्राणां च व्याख्यान ग्रन्थ:। तै. सं. 1/5/1
6. ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि, यजुर्वेद,सामवेदाथर्वणं चतुर्थम्। छान्दोग्योपनिषद्
7. अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातन। दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थम् ऋग्यजु: सामलक्षणम्।
8. तस्मात् यज्ञात् सर्वहुत: ऋच: सामानि जज्ञिरे। छन्दासि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत॥
9. छन्द: पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते, ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तंश्रोत्रमुच्यते। शिक्षाघ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम् तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥ पा. शि. श्लोक सं. ४१-४२
10. स्वरवर्णाद्युच्चारण प्रकारो यत्र शिक्षते उपदिश्यते सा शिक्षा – सायण
11. शिक्षाघ्राणं तु वेदस्य।
12. कल्पो वेदहितानां कर्मणामनुपूर्व्येण कल्पना शास्त्रम्। ऋक्. प्रा.